आई एस एस एनः 0971-9873

आई सी एम आर पत्रिका

वर्ष-23, अंक-6 एवं 7

जून-जुलाई, 2009

लसीका फाइलेरिया रोग दूर करने में रोगवाहक नियंत्रण और व्यापक औषध प्रयोग का एकीकरण

वूशेरेरिया *बैंक्रोफ्टाई, ब्रुगिया मलायी और बी.टीमोरी* नामक गोलकृमि (नेमेटोड) परजीवियों से उत्पन्न होने वाला लसीका फाइलेरियारोग विश्व के कई विकासशील देशों की एक प्रमुख जन स्वास्थ्य समस्या है, भारत भी इससे अछूता नहीं है। एक बिलियन से अधिक (विश्व की 20% आबादी) लोग फाइलेरियारोग की उपस्थिति वाले क्षेत्रों में रहते हैं जिनमें एक चौथाई लोगों के संक्रमित होने की संभावना है। हालांकि, उपयुक्त नियंत्रण नीतियों के आगमन से प्रतीत होता है कि इस रोग का उन्मूलन संभव है। इसलिए 50वीं विश्व स्वास्थ्य एसेम्बली (डब्ल्यू एच ए 50.29) के प्रस्ताव के अनुरूप विश्व स्वास्थ्य संगठन ने वर्ष 2020 तक लसीका फाइलेरियारोग दूर करने हेतु एक व्यापक कार्यक्रम (जी पी ई एल एफ) की शुरुआत की है। यह कार्यक्रम दो घटकों पर आधारित हैः प्रथम-संचरण के विस्तार को रोकना, तथा द्वितीय-इससे प्रभावित लोगों के कष्ट को कम करना। संचरण को रोकने के लिए लसीका फाइलेरियारोग की उपस्थिति वाले जिलों की पहचान करना और उसके बाद खतरे की आशंका वाली सम्पूर्ण आबादी की चिकित्सा हेतु सभी समुदायों का सामूहिक इलाज करना आवश्यक है। अधिकांश देशों में इस कार्यक्रम के अन्तर्गत 4 से 6 वर्षों की अवधि तक वर्ष में एक बार दो औषधियों की एक मिश्रित खुराक दी जाती है, ये औषधिया हैं- एल्बेण्डाज़ोल के साथ डाईइथाइलकार्बामाज़ीन (डी ई सी) अथवा आइवरमेक्टिन। आइवरमेक्टिन का प्रयोग ऐसे इलाकों में किया जाता है जहां ऑकोसर्सिएसिस अथवा लोएसिस रोगों की भी उपस्थिति होती है। इसके विकल्प के रूप में रोगस्थानिक क्षेत्रों में समुदाय द्वारा पूरे एक वर्ष तक डी ई सी के साथ पुष्टीकृत नमक (कुकिंग सॉल्ट) का प्रयोग किया जाता है जो औषध प्रयोग के समान ही प्रभावी है। इस रोग की चपेट में आने के बाद उत्पन्न कष्टों को कम करने के लिए सामुदायिक शिक्षा कार्यक्रमों को लागू करना आवश्यक होगा जिससे प्रभावित रोगियों में जागरूकता बढ़ाई जा सके। जी पी ई एल एफ कार्यक्रम के एक सदस्य के रूप में भारत ने वर्ष 2015 तक देश से इस रोग को समाप्त करने का लक्ष्य निर्धारित किया है। भारत के 19 राज्यों/केन्द्र शासित प्रदेशों में लसीका फाइलेरिया रोग की उपस्थिति है जहां 45.9 करोड़ लोगों को इसके संक्रमण का खतरा है, 2.9 करोड़ लोग फाइलेरियारोग से पीड़ित हैं और 2.2 करोड़ लोग माइक्रोफाइलेरिया के वाहक हैं, कुल मिलाकर इस रोग से प्रभावित विश्व के 40% व्यक्ति भारत में हैं।

फाइलेरिया रोग की उपस्थिति उच्च दरों में रोग संचरण तथा निरन्तर स्थानिकता जैसी स्थितियों पर निर्भर करती है। किसी संक्रमणशील रोगवाहक द्वारा हजारों बार (2700 से <100,000) दंशन के उपरांत एक नया मानव रोगी इसके संक्रमण की चपेट में आता है। *क्युलेक्स क्विंकीफेसिएटस* मच्छर द्वारा *डब्ल्यू बैंक्रोफ्टाई* परजीवी के संचरण के लिए माइक्रोफिलेरीरक्तता (रक्त में माइक्रोफिलेरी की उपस्थिति)के लिए संक्रमणशील मच्छर द्वारा अनुमानतः लगभग 2,765 बार दंशन होता है, जबकि औसत वार्षिक दंशन दर (एनुअल बाइटिंग रेट अर्थात ए बी आर) 80,000 दंशन/व्यक्ति/वर्ष से बढ़ गई और विभिन्न नृजातीय वर्गों के वयस्कों में माइक्रोफिलेरीरक्तता दर 4-11% हो गई। यह देखते हुए कि बड़ी संख्या में लसीका फाइलेरियारोग पीड़ित रोगी बालकाल अर्थात माइक्रोफिलेरीरक्तता विकसित होने से वर्षों पूर्व इससे संक्रमित होते हैं, जिससे संकेत मिलता है कि लसीका फाइलेरियारोग की घटना पूर्व धारणा के विपरीत बहुत कम संक्रमणशील मच्छरों के दंशन द्वारा होती

प्रकाशन एवं सूचना प्रभाग, भारतीय आयुर्विज्ञान अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली - 110029

है। इसलिए, व्यापक औषध प्रयोग कार्यक्रम में छोटे बच्चों को लक्षित करने पर बल दिया जाना चाहिए।

उष्णकटिबंधीय स्थितियों में अनेक रोगवाहकों की उपस्थिति में संक्रमणशील मच्छरों द्वारा निश्चित संख्या से कम दंशन की स्थिति में लसीका फाइलेरियारोग लम्बी अवधि तक एक स्थानिक रोग के रूप में नहीं पाया जाता। उदाहरण के तौर पर पर्यावरणी प्रबंधन के दृष्टिकोण से सिंगापुर और मुम्बई जैसे उत्तम शहरों और क्यूबा, ट्रिनीडाड, गुअम और मॉरीशस जैसे द्वीपों में बेहतर स्वच्छता के कारण रोगवाहक की सघनता घटने के परिणामस्वरूप लसीका फाइलेरियारोग समाप्त होना प्रतीत हुआ। इसके अतिरिक्त, सोलमन द्वीपसमूह, टोगो एवं पापुआ न्यू गिनी के कुछ भागों में मलेरियारोधी कार्यक्रम के अन्तर्गत घरों में कीटनाशियों के छिड़काव के परिणामस्वरूप फाइलेरियारोग का संचरण बाधित हो गया। आमतौर पर, मच्छर नियंत्रण की मानक विधियों को अपनाने के साथ यदि इसे पूरी तरह रोका नहीं जा सकता तो फाइलेरिया संचरण के खतरे को काफी हद तक कम करना संभव है।

वूशेरेरिया बैंक्रोफ्टाई के क्युलेक्स रोगवाहक

विश्व में लसीका फाइलेरियारोग की लगभग आधी घटनाएं क्युलेक्स जाति के मच्छरों द्वारा संचरित होती हैं और भारत में लसीका फाइलेरियारोग परजीवी संचरण की 98 प्रतिशत घटनाओं के पीछे *क्युलेक्स क्विंकीफेसिएटस* मच्छरों का हाथ पाया जाता है। यह मच्छर केवल अंधेरे में दंशन करता है और अधिकांश रोगस्थानिक शहरी क्षेत्रों में केवल रात्रिकालिक *वूशेरेरिया बैंक्रोफ्टाई* परजीवी का संचरण करता है। *क्यु. क्विंकीफेसिएटस* मच्छर आमतौर पर रुके हुए और कार्बनिक तत्वों से प्रदूषित जल में प्रजनन करता है। अधिकांश शहरी क्षेत्रों में क्युलेक्स मच्छर का प्रजनन मुख्यतया भरे हुए मल कुण्डों और सोखता गड्ढों में होता है, नियंत्रण उपायों में ऐसे स्थलों को लक्षित किया जा सकता है। मानसून के दौरान विशेषतया निचले इलाकों में पानी जमा हो जाता है, जहां क्युलेक्स पर नियंत्रण रखना कठिन हो जाता है। जहां संभव होता है खुले नालों के बहते रहने की स्थिति में दंशन करने वाली *क्यु.क्विंकीफेसिएटस* की वयस्क आबादी प्रभावी रूप से समाप्त हो जाती है (उदाहरण के तौर पर पॉण्डिचेरी, भारत तथा टांगा, तंजानिया में), परन्तु इसके लिए नियमित प्रयास और पर्याप्त व्यय की जरूरत होती है। सफाई और जल निकासी व्यवस्था को उन्नत बनाना निःसंदेह शहरी क्षेत्र की क्युलेक्स समस्या का दीर्घ-कालिक हल है। हालांकि, इस पर व्यय अधिक होता है, परन्तु सामाजिक प्रगति और अन्य आंत्र रोगों एवं हेलमिंथ संक्रमणों के विरुद्ध स्वास्थ्य की दिशा में होने वाले लाभों से लम्बी अवधि तक सफाई प्रणाली पर अधिक व्यय नहीं होता है। आर्थिक रूप से समृद्ध सिंगापुर, कोस्टा रीका, ट्रिनीडाड जैसे देशों में क्युलेक्स मच्छरों का स्तर इतना घट गया जिससे लसीका फाइलेरियारोग का संचरण ही बाधित है। विकासशील देशों में अधिक मूल्य प्रभावी विधियों को कार्यान्वित करने की आवश्यकता है जिससे क्युलेक्स समस्या का सामना करने के लिए वित्तीय सहायता प्रदान करने वाली सरकारी एजेंसियों के व्यय को कम किया जा सके।

क्युलेक्स क्विंकीफेसिएटस हेतु इंटरवेंशन नीतियां

क्यु. क्विंकीफेसिएटस के प्रजनन पर नियंत्रण रखने की अनेक विधियां उपलब्ध हैं। इस रोगवाहक मच्छर का कम से कम दो तिहाई उत्पादन बाढ़ प्रभावित क्षेत्रों के गड्ढों में होता है और ऐसे गड्ढों में रोगवाहक की संभाव्यता को दीर्घ अवधि तक समाप्त करने के लिए उनको एक्सपैण्डेड पॉलीस्टिरीन (ई पी एस) बीड्स से ढकने की सिफारिश की जाती है। मानसून के दौरान यह प्रयास पर्याप्त नहीं होगा। क्युलेक्स मच्छरों के अधिकांश प्रजनन स्थलों में बाढ़ से भरे गड्ढे, तालाब और पानी भरे डिब्बे सम्मिलित हैं। लसीका फाइलेरियारोग की उपस्थिति वाले क्षेत्रों विशेषतया जिन इलाकों में क्युलेक्स और अन्य मच्छरों का नियंत्रण नहीं हो सका है वहां कीटनाशी संसिक्त मच्छरदानियों को आदतन प्रयोग करना अनिवार्य है। यह विधि लोकप्रिय होने के साथ-साथ मलेरिया एवं मच्छर जनित अन्य रोगों के विरुद्ध पर्याप्त सुरक्षा प्रदान करने वाली है। जिन स्थानों में बेहतर स्वच्छता एवं जल-निकासी प्रणालियां संभव हैं, वहां लसीका फाइलेरियारोग के साथ-साथ अन्य गोल कृमि एवं आंत्र रोगों के संचरण के खतरों में अत्यधिक गिरावट आ जाती है। प्रस्तुत आलेख में रोगवाहक नियंत्रण के लिए उपलब्ध विभिन्न विकल्पों का वर्णन है।

रासायनिक कीटनाशियों का प्रयोग

डिंभकों पर नियंत्रण रखने के लिए ऑर्गेनोफॉस्फेट कीटनाशियों(जैसे-फेंथिऑन,टेमीफॉस) का व्यापक प्रयोग किया गया है, परन्तु प्रतिरोध के व्यापक विकास के चलते क्युलेक्स की आबादियों के विरुद्ध उनकी प्रभावकारिता घट जाती है। तेल का प्रयोग बहुत कम उपयुक्त पाया जाता है, क्योंकि प्रजनन के लिए *क्यु.क्विंकीफेसिएटस* प्रदूषित जल को वरीयता देता है जिसमें डिटर्जेंट की उपस्थिति के कारण डिम्भक नाशी के रूप में प्रयुक्त जहां हल्के तेल (मॉसकीटो लार्वीसाइडल ऑयल्स) का आसानी से इमल्शीभवन हो जाता है वहीं भारी तेल सोखता गड्ढों को अवरुद्ध कर देते हैं। मच्छरों के डिंभकों और प्यूपा को समाप्त करने में पाइरेथ्रॉयड्स का प्रयोग नहीं किया जाना चाहिए, क्योंकि इनका प्रयोग वयस्क मच्छरों को समाप्त करने के लिए किया जाता है। वैसे अन्य प्रकार के मच्छरों की तुलना में क्युलेक्स मच्छरों में अधिकांश कीटनाशियों के प्रति अपेक्षाकृत अधिक सहायता होती है। जिससे वयस्क क्युलेक्स मच्छरों पर नियंत्रण अप्रभावी हो जाता है। आमतौर पर रसायनों, उपकरणों और श्रम पर अधिक व्यय होने के कारण डिंभकनाशी कार्यक्रम *डब्ल्यू. बैक्रोफ्टाई* के रोगवाहक *क्युलेक्स* मच्छरों के प्रति न तो लाभकारी है और न ही उन्हें निरन्तर चलाया जा सकता है। बाढ़ प्रभावित स्थानों और नालियों में क्युलेक्स मच्छरों का अत्यधिक प्रजनन होता है, उन स्थानों पर रसायनों का प्रयोग आसान नहीं है, इन स्थितियों में विशेषतया मानसून के महीनों में जलनिकासी की बेहतर व्यवस्था होने के बावजूद भी डिंभकनाशी कार्यक्रम द्वारा फाइलेरियारोग की व्यापकता में कमी लाने पर पर्याप्त प्रभाव नहीं पड़ता।

पॉलीस्टिरीन बीड्स का प्रयोग

क्युलेक्स मच्छरों पर नियंत्रण रखने के लिए प्रजनन स्थलों पर एक्सपैण्डेड पॉलीस्टिरीन बीड्स का प्रयोग करने पर प्रजननशील क्युलेक्स मच्छरों का पानी से सीधे सम्पर्क टूट जाता है जिसके परिणामस्वरूप डिम्भक और प्यूपा नष्ट हो जाते हैं। तैरते हुए पॉलीस्टिरीन बीड्स अधिक समय तक नष्ट नहीं होते जिससे क्युलेक्स की आबादी पर लम्बी अवधि तक नियंत्रण रहता है। एक्सपैण्डेड पॉलीस्टिरीन बीड्स का प्रभावी रूप से प्रयोग केवल उन स्थानों में होता है जो चारों ओर दीवारों से घिरे होते हैं जैसे कि शौचालय गड्ढें, सोखता गड्ढे, मलकुण्ड, बाढ़ प्रभावित तहखाने आदि। ज़ंज़ीबार, तंज़ानिया और भारत के तमिल नाडु में कई वर्षों तक सभी गड्ढों को एक्सपैण्डेड पॉलिस्टरीन बीड्स से ढकने के परिणामस्वरूप *क्यु.क्विंकीफेसिएटस* के प्रजनन स्थल समाप्त किए गए। इन स्थितियों में रोगवाहक नियंत्रण कार्यक्रमों को समुदाय को हस्तांतरित किया गया और मलकुण्डों में फाइलेरियारोग के वाहक मच्छरों के प्रजनन पर निगरानी रखने हेतु युवा कार्यकर्ताओं की सेवाएं ली गईं। पूर्वी अफ्रीका के कस्बों में प्रत्येक गड्ढों को एक बार एक्सपैण्डेड पॉलीस्टिरीन बीड्स से ढकने के परिणामस्वरूप कुछ वर्षों तक नियंत्रण देखा गया। क्युलेक्स मच्छर के सतत नियंत्रण को इस साधारण विधि की सहायता से सीमित अवधि के व्यापक औषध प्रयोग के प्रभाव में अत्यधिक वृद्धि हो गई, क्योंकि व्यापक औषध प्रयोग कार्यक्रम के बन्द होने के बाद इसका पुनः उभरना बन्द हो गया। वेस्टइंडीज़ में शौच गड्ढों को पॉलीस्टिरीन के टूटे हुए टुकड़ों से ढकने के परिणामस्वरूप लम्बी अवधि तक *क्यु. क्विंकीफेसिएटस* मच्छरों पर नियंत्रण देखा गया है। बाढ़ प्रभावित इलाकों में पॉलीस्टिरीन बीड्स के बह जाने के कारण उसकी उपयोगिता घट जाती है। जहां क्युलेक्स प्रजनन के लिए कम से कम दो तिहाई स्थल पॉलीस्टिरीन बीड्स के प्रयोग के लिए उपयुक्त हों, और स्वच्छता प्रणाली (जब निकासी, मलकुण्ड, सेप्टिक टैंक, आदि) को बेहतर बनाना संभाव्य नहीं हो, वहां फाइलेरियारोग के रोगवाहक मच्छरों पर नियंत्रण रखने में इनका प्रयोग किया जा सकता है।

बायोसाइड का प्रयोग

बैसिलस स्फेरिकस नामक जीवाणु प्रदूषित जल में क्युलेक्स डिंभकों को नष्ट कर सकते हैं, जबकि *बैसिलस थुरिंजिएंसिस* इन स्थितियों में प्रभावी नहीं होते। ये बायोपेस्टीसाइड्स बाज़ार में उपलब्ध हैं; विशेषतया संपन्न देशों के नम इलाकों में रोगवाहक मच्छरों पर काबू रखने के लिए इनका प्रयोग किया जाता है। व्यावहारिक तौर पर खुले प्रजनन स्थलों में लसीका फाइलेरियारोग के रोगवाहक मच्छर पर नियंत्रण रखने के लिए प्रयुक्त *बी.स्फेरिकस* से वैसे परिणाम नहीं मिले जैसा कि उन्हीं क्षेत्रों में पॉलीस्टिरीन बीड्स के प्रयोग से मिले थे (उदाहरण के तौर पर जंज़ीबार और तमिल नाडु में)। *क्यु.क्विंकीफेसिएटस* द्वारा *बी.स्फेरिकस* के विरुद्ध तेजी से प्रतिरोध शक्ति विकसित होने और इस जीवाणु के गुणवत्ता नियंत्रण से संबद्ध समस्याएं पाई गई हैं। दक्षिण भारत के कोच्चि में *क्यु.क्विंकीफेसिएटस* की एक आबादी में *बी.स्फेरिकस* के प्रति प्रतिरोध देखा गया, उन क्षेत्रों में दो वर्षों की अवधि तक *बी.स्फेरिकस* 1593M के एक उत्पाद का 35 चक्रों तक छिड़काव किया गया था। विकासशील देशों में निम्न आर्थिक स्तर के समुदायों में लसीका फाइलेरियारोग पर नियंत्रण रखने हेतु इन जैवउत्पादों के प्रयोग पर उपयुक्त उत्साह दिखाई नहीं देता। कीट वृद्धि पर नियंत्रण रखने वाले कारकों में पाइरीप्रॉक्सीफेन सर्वाधिक प्रभावी है और क्युलेक्स मच्छरों की अपरिपक्व आबादी को समाप्त करने में इसका प्रयोग किया जा सकता है।

कीटनाशी संसिक्त सामग्री

ऐसे उपाय जो घरों में *क्यु.क्विंकीफेसिएटस* की पहुंच को घरों में रोकते हैं जैसे- छतों को बैठाना अथवा कीटनाशी संसिक्त छज्जों के परदों का प्रयोग क्युलेक्स दंशन को कम करते दर्शाया गया। कीटनाशी संसिक्त मच्छरदानियां क्युलेक्स मच्छरों को परिवर्तित करके चिड़ियों को दंशन करने पर मजबूर करती हैं तथा *वूशेरिया बैंक्रोफ्टाई* के मानव में संचरण क्षमता को कम करती हैं। यह प्रदर्शित किया गया कि पाइरेथ्राइड संसिक्त मच्छरदानियों के द्वारा कुछ ही *क्यु.क्विंकीफेसिएटस* नष्ट हुए किन्तु उनके दंशन करने की दर में उल्लेखनीय गिरावट आ गई। केन्या के तटीय क्षेत्रों में पाइरेथ्राइड संसिक्त मच्छरदानियों के प्रयोग के पश्चात् मानव दंशन से मवेशी दंशन की तरफ शिफ्ट देखा गया। दक्षिण भारत में डेल्टामेथ्रिन संसिक्त हेसेन परदों को प्रयोग में लाकर सम्पन्न 2 फील्ड परीक्षणों में *एनॉफिलीज़ सबपिक्टस* तथा *क्यु.क्विंकीफेसिएटस* मच्छरों की घरों के भीतर विश्राम कर रहे तथा मानव-दंशन सघनता में 14 दिनों तक सांख्यिकी रूप से उल्लेखनीय गिरावट देखी गई। फाइलेरिया रोगस्थानिक क्षेत्रों में जहां रुके हुए पानी की प्रदूषित नालियां *क्यु.क्विंकीफेसिएटस* के प्रजनन के प्रमुख स्रोत हैं, वहां पाइरेथ्राइड संसिक्त सामग्री को लागू करके मानव-रोगवाहक सम्पर्क को काफी हद तक कम किया जा सकेगा।

सामूहिक औषधि प्रयोग एवं रोगवाहक नियंत्रण

दक्षिण भारत में तिनकुईलुर में वार्षिक सामूहिक औषधि उपचार के साथ-साथ रोगवाहक नियंत्रण (शोष खड्ढों में ई पी एस की गोलियां तथा अनुपयोगी कुओं में लार्वाभक्षी मछलियों का प्रयोग) के द्वारा फाइलेरिया मीट्रिक सूचकों में गिरावट आ गई तथा एम डी ए (सामूहिक औषधि उपचार) के साथ रोगवाहक नियंत्रण के एकीकरण के लाभ का ठोस प्रमाण प्रदान किया गया। ऐसे गांवों में जहां एम डी ए के साथ रोगवाहक नियंत्रण को एक अनुषंगी के रूप में प्रयोग किया गया, वहां रोगवाहक सघनता में अत्यधिक गिरावट आ गई, तथा तिनकुईलुर में मौजूद थोड़े से मच्छरों में कोई भी संक्रामक नहीं पाया गया। प्रथम वर्ष के दौरान, जब एम डी ए के साथ रोगवाहक नियंत्रण को शामिल किया गया संचरण क्षमता (मच्छरों के मानवों पर बैठने पर आधारित कैच के आकलन पर) में गिरावट काफी तेज थी जो द्वितीय वर्ष में समान हो गई। तीसरे वर्ष एम डी ए की अनुपस्थिति में एम डी ए + रोगवाहक नियंत्रण वाले गांवों में संचरण

गिरावट बनी रही, जबकि केवल एम डी ए वाले गावों में फाइलेरियल संक्रमण वेरिएबल्स में पुनः वृद्धि देखी गई (चित्र 1)।

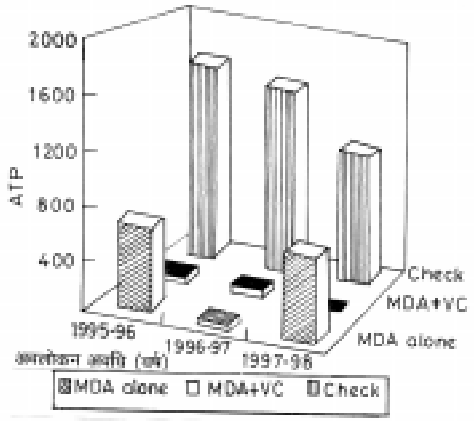

चित्र 1. वार्षिक संचरण क्षमता पर इंटरवेंशन नीतियों का प्रभाव

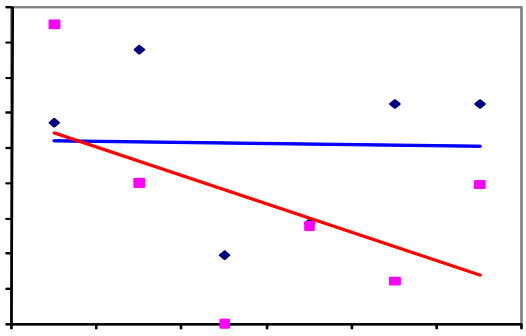

चित्र 2. 2-5 वर्ष में 2 उपचार आर्म्स में एंटीजेनिमिया व्यापकता परिवर्तन

केवल एम डी ए प्राप्त कर रहे गांवों की तुलना में एम डी ए एवं रोगवाहक नियंत्रण प्राप्त कर रहे गावों में फाइलेरियल एंटीजीनिमिया निम्न थी तथा 15-25 वर्ष के आयु वर्ग में इसमें उल्लेखनीय गिरावट बनी रही। एम डी ए के साथ-साथ रोगवाहक नियंत्रण प्राप्त कर रहे गांवों में 15-25 वर्ष के आयु वर्ग में रोगवाहक नियंत्रण के निश्चित प्रभाव को भी देखा गया। सबसे कम आयु वर्ग (2-5 वर्ष) में एम डी ए के लिए अकेले एवं एम डी ए + रोगवाहक नियंत्रण हेतु रिग्रेशन समीकरण ने उल्लेखनीय अन्तर दर्शाया (चित्र 2)। एम डी ए+ रोगवाहक नियंत्रण में लाइन ने b= -0.81 के साथ तेज ढलान प्रदर्शित किया।

केवल एम डी ए प्राप्त कर रहे गांवों में पकड़े गए मच्छरों में उल्लेखनीय संख्या में फाइलेरियल लार्वी (L3 अवस्था भी शामिल) पाए गए। एम डी ए के साथ रोगवाहक नियंत्रण प्राप्त कर रहे गांवों में अत्यधिक कम अथवा थोड़े से ही फाइलेरियल लार्वी पाए गए तथा डिसेक्शन के लिए थोड़े से ही मच्छर उपलब्ध थे। इससे संकेत मिलता है कि, एम डी ए + रोगवाहक नियंत्रण वाले गांवों के बच्चों में निम्न/कोई नहीं संक्रमणयुक्त दंशन होता है।

केवल एम डी ए के प्रयोग के द्वारा समुदाय में यदि कोई कमी नहीं थी तो फाइलेरियल संक्रमण लोड में गिरावट आ गई। हालांकि, फ्रेंच पॉलीनीसिया में फाइलेरिया रोग नियंत्रण के 36 वर्ष पश्चात् भी रेज़ीड्युल माइक्रोफाइलेरीमिया 0.4% तथा एन्टीजीनिमिया धनात्मकता 4.6% पाई गई। डी ई सी औषधि सम्मिश्र के साथ एम डी ए का प्रयोग फाइलेरियल संक्रमण वेरिएबल्स को कम करने में डी ई सी के एकल प्रयोग की तुलना में अधिक प्रभावी पाया गया। एम डी ए कार्यक्रम में किसी भी कमी के दौरान रोगवाहक नियंत्रण महत्वपूर्ण पाया गया। रोगवाहक नियंत्रण की विधियों के महत्व का वर्णन किया गया है, क्योंकि वे रोग संचरण की रोकथाम में प्रमुख भूमिका अदा करते हैं। चीन में लसीका फाइलेरिया रोग के विरुद्ध अभियान में सफलता देखी गई, जब रोगवाहक नियंत्रण को अन्य इंटरवेंशन उपायों के साथ एकीकृत किया गया जैसे कि डी ई सी के प्रयोग (चयनित एवं सामूहिक उपचार तथा पुष्टीकृत नमक के रूप में), जिसके फलस्वरूप पुनः उभरने के बिना फाइलेरिया संचरण को रोका जा सका।

यह अत्यधिक मुश्किल लगता है कि उच्च रोगवाहक क्षमता के कारण क्युलेक्स द्वारा संचरित लसीका फाइलेरिया रोग वाले क्षेत्रों में संचरण की सतत रोकथाम में एम डी ए पर्याप्त होगा। इसलिए कुछ जानपदिकरोगविज्ञानी सेटिंग्स में संचरण की रोकथाम बनाए रखने में रोगवाहक नियंत्रण एक महत्वपूर्ण सम्पूरक होगा। मकुन्डुची, जंजीबार में एक समीप के अनुपचारित समुदाय में बिना किसी परिवर्तन के, सभी वेट पिट लैट्रिन्स में ई पी एस बीड्स के प्रयोग के द्वारा क्युलेक्स के मच्छरों की आबादी में 98% गिरावट आ गई। एम डी ए के साथ डी ई सी के एक राउण्ड के प्रयोग के पश्चात् तृतीय अवस्था के लार्वी (L3)सहित मच्छरों की संख्या में गिरावट आ गई, जिसके फलस्वरूप उपचारित क्षेत्र में प्रतिवर्ष संक्रामक दंशन की संख्या में कुल 99.7% की गिरावट देखी गई तथा 10 वर्ष तक माइक्रोफाइलेरियारक्तता निम्न बनी रही। एम डी ए के साथ रोगवाहक नियंत्रण के एकीकरण के द्वारा एम डी ए द्वारा प्राप्त लाभ को बढ़ाकर फाइलेरिया रोग उन्मूलन के लिए वांछित समय में कमी आ जाती है। नए संक्रमणों की घटनाओं को रोकने के लिए < 100 ATP एवं < 0.5T11 के स्तरों की प्राप्ति को आवश्यक माना जाता है। संचरण की रोकथाम के लिए इस निम्न संचरण स्तर को पर्याप्त लम्बी अवधि तक बनाए रखना चाहिए तथा यह फाइलेरिया रोग के उन्मूलन के लिए अत्यधिक वहनयोग्य एवं टिकाऊ तरीका है विशेषकर तब जब समुदाय को एम डी ए के साथ सरल रोगवाहक नियंत्रण उपायों को लागू करने के लिए सशक्त किया जा सके।

एकीकृत रोगवाहक नियंत्रण

भारत में पॉण्डिचेरी में एक 5 वर्षीय एकीकृत रोगवाहक नियंत्रण कार्यक्रम के अन्तर्गत रोगवाहक प्रजनन की रोकथाम के लिए विभिन्न उपाए लागू किए गए, जिनमें शामिल था-कुंओं को बन्द करना, घरों के ऊपर टंकियों तथा सेनीटेशन स्ट्रक्चर्स में ई पी एस (थर्माकोल की गोलियों) बीड्स का प्रयोग। उपयुक्त प्रजनन स्थलों में लार्वाभक्षी मछली जैसे जैविक नियंत्रण के उपाय भी लागू किए गए। कुछ क्षेत्रों में जहां रासायनिक

डिंभकनाशियों की आवश्यकता थी वहां ज्युवेनाइल हॉर्मोन एनॉलॉग्स के साथ फेन्थियॉन का प्रयोग किया गया। 5 वर्ष तक एकीकृत रोगवाहक नियंत्रण के पश्चात् घरों के अन्दर विश्राम कर रहे *क्यु.क्विंकीफेसिएटस* की सघनता में 90% की गिरावट आ गई तथा माइक्रोफाइलेरिया रक्तता में 60% की गिरावट देखी गई। लागत का विश्लेषण करने पर देखा गया कि पारम्परिक कीटनाशकों के प्रयोग की तुलना में एकीकृत रोगवाहक नियंत्रण विधियां किफायती थीं। परन्तु इस नीति को हटा लेने के पश्चात् रोगवाहक प्रजाति में पुनः वृद्धि देखी जाती है।

सामुदायिक भागीदारी

रोगवाहक नियंत्रण कार्यक्रम की सफलता के लिए समुदाय की भागीदारी अत्यधिक महत्वपूर्ण है क्योंकि समस्या मानव तथा इसके पर्यावरण के इर्द-गिर्द ही रहती है। इसलिए प्रत्येक व्यक्ति, परिवार तथा समुदाय को सूचित करना, शिक्षित करना तथा उनकी भागीदारी सुनिश्चित करना आवश्यक है। सभी रोगवाहक नियंत्रण कार्यक्रमों की शुरुआत एक कोर अथवा समन्वयन समिति के गठन द्वारा होनी चाहिए जिसमें सरकारी ऐजेंसियों के विभिन्न प्रमुख एवं स्थानिक समाज के अग्रणियों का होना आवश्यक है। जन स्वास्थ्य अधिकारी इन कार्य समितियों को कार्यक्रम से सम्बद्ध तकनीकी जानकारी उपलब्ध कराएंगे जो उनके घरों, घरों के आस-पास तथा अन्ततः समाज से रोगवाहक प्रजनन के उन्मूलन के कार्य में सहायक होगी तथा तभी हम रोग-मुक्त समाज की कल्पना साकार कर पाएंगे। सरकार को सामुदायिक अग्रणियों को संसाधन उपलब्ध कराने चाहिए, जो स्वैच्छिक कार्यकर्ताओं को तैयार करके कार्य को पूर्ण करा सकेंगे जो एक अकेला परिवार नहीं कर सकता। स्थानिक रोगवाहक नियंत्रण कार्यक्रम में सामुदायिक भागीदारी की प्रेरणा के रूप में उनके अपने स्थानिक व्यस्त कार्यक्रम के बावजूद इस कार्यक्रम में शामिल होने के लिए उनका क्या मकसद है यह भी ज्ञात होना आवश्यक है किसी भी कार्यक्रम में समुदाय के शामिल होने से पहले उनकी वांछित भूमिका को स्पष्ट किया जाना चाहिए। स्वास्थ्य पेशेवरों एवं लोगों के बीच निरन्तर वार्ता अत्यधिक आवश्यक है, जिसका उद्देश्य समुदाय को प्रेरित करना होना चाहिए ताकि लोग नियंत्रण कार्यक्रम को लोगों का कार्यक्रम समझकर स्वीकार्य करें।

निष्कर्ष

संचरण की रोकथाम के लिए एक प्रभावी रोगवाहक नियंत्रण एक महत्वपूर्ण पूरक प्रयास होगा तथा इसके साथ-साथ एम डी ए से प्राप्त लाभों को भी बनाए रखा जा सकेगा। यह अत्यधिक किफायती विकल्प है तबकि जब प्रतिव्यक्ति रोगी की पहचान एवं उपचार अधिक हो जाती है जब रोगियों की संख्या कम होती जाती है। रोगवाहक नियंत्रण के द्वारा दो लक्ष्यों की प्राप्ति की जा सकती है। एक रोगवाहक क्षमता को कम करना तथा दूसरे मानव-रोगवाहक सम्पर्क के अवसरों को कम करना। भारत में *क्यु.क्विंकीफेसिएटस* के लिए रोगवाहक नियंत्रण वर्तमान में मौजूद स्थानिक स्थितियों के आधार पर उपयुक्त रूप से लागू करना चाहिए, ताकि लागू किए गए नियंत्रण उपायों को बनाए रखा जा सके। रोगवाहकों की स्पेशियल एवं टेम्पोरल टार्गेटिंग के द्वारा रोगवाहक नियंत्रण को किफायती बनाया जा सकता है। समुदाय को नियोजन स्तर से ही शामिल करने के लिए सशक्त करना चाहिए तथा शिक्षण को रोगवाहक नियंत्रण नीति का महत्वपूर्ण हिस्सा होना चाहिए। एम डी ए आधारित लसीका फाइलेरिया रोग उन्मूलन कार्यक्रम के लिए कई चुनौतियां हैं तथा इन चुनौतियों पर एम डी ए के साथ रोगवाहक नियंत्रण को शामिल करके पार पाया जा सकता है। रोगवाहक नियंत्रण के संभावित लाभ को स्पष्ट किया गया है जैसे (**i**) संक्रमण के व्यक्तिगत केन्द्र बिन्दु (फोसाई) की पहचान के बिना लसीका फाइलेरियारोग संचरण का संदमन; (**ii**) रोग के पुनः उभरने के खतरे को कम करना; (iii) औषधि प्रतिरोध के खतरे को कम करना; तथा (**iv**) मच्छर उपद्रव को कम करके सामुदायिक सहयोग को बढ़ाना।

यह लेख मदुरई स्थित कीटविज्ञानी आयुर्विज्ञान अनुसंधान केन्द्र के अनुसंधान अधिकारी डॉ आई.पी.सुनिश, वैज्ञानिक 'डी' डॉ आर. राजेन्द्रन, तकनीकी अधिकारी श्री एम. मनीरत्नम तथा वैज्ञानिक 'एफ एवं प्रभारी अधिकारी डॉ बी.के. त्यागी के आई सी एम आर बुलेटिन के अक्टूबर-दिसम्बर, 2008 अंक में "*इन्टीग्रेटिंग मास ड्रग एडमिनेस्ट्रेशन विद वेक्टर कंट्रोल फॉर दि एलीमिनेशन ऑफ लिम्फैटिक फाइलेरियासिस*" शीर्षक से प्रकाशित लेख पर आधारित है।

कालाज़ार के नियंत्रण में व्यक्तिगत एवं सामाजिक दायित्व

भारत में कालाज़ार मुख्य रूप से बिहार, पश्चिम बंगाल, उत्तर प्रदेश एवं झारखण्ड में एक गंभीर स्वास्थ्य समस्या है। विश्वस्तर पर कालाजार मरीजों की कुल संख्या का 80 प्रतिशत भारत में एवं भारत की 90 फीसदी रोगियों की संख्या बिहार में पाई जाती हैं, जहां सदियों से यह बीमारी समय-समय पर महामारी का रूप धारण कर जन-जीवन को अस्त व्यस्त कर देती है। कालाजार विशेषतयः निम्न आय वाले निर्धन एवं मजदूर वर्ग में पाया जाता है। जहां नमी और बालू मक्खी की उपस्थिति रहती है। अत्यधिक गरीब समुदाय मुशहर जिनकी रोज की कमाई सिर्फ उसी दिन के लिए होती है, इस बीमारी से सर्वाधिक पीड़ित है।

कालाज़ार का संचरण बालू मक्खी के द्वारा होता है। बालू मक्खी अत्यधिक सूक्ष्म आकार की होती है जो देखने में मच्छर जैसी लगती है, लेकिन जब यह सतह पर बैठती है, तो इसके पंख 'V' आकार में उर्ध्व दिशा में रहते हैं। बालू मक्खी फुदक-फुदक कर चलती है, जबकि मच्छर लम्बी दूरी तक उड़ान भर सकता है। बालू मक्खी अपना जीवन चक्र अंधेरे घरों में खासकर गोशालाओं में जहां नमी एवं जानवरों के मलमूत्र से मिश्रित हल्की भुरभुरी मिट्टी हो पूरा करती है। इनके जीवन चक्र में अण्डा, लार्वा, प्यूपा की अवस्था होती है। इन अवस्थाओं से गुजरने के पश्चात ये वयस्क नर/मादा के रूप में परिवर्तित हो जाते हैं। मादा मानव/मवेशियों का रक्तपान करती है। रक्त पान के चार दिनों पश्चात अण्ड निक्षेपण हो सकता है। एक मादा बालू मक्खी दो से 60 अण्ड़े देती है। इनके पूरे जीवन चक्र को पूरा होने में लगभग एक माह का समय गर्मी के दिनों में एवं जाड़े के मौसम में दो महीने का समय लगता है। बालू मक्खी की अनेक प्रजातियां होती हैं। उनमें *फ्लेबोटोमस अर्जेन्टिपस* ही कालाज़ार फैलाने में प्रभावशील है। जब बालू-मक्खी किसी कालाज़ार से संक्रमित मनुष्य का

रक्तपान करती है, तो 8-10 दिनों के अंदर बढ़कर परजीवी संक्रमण की अवस्था में आ जाता है। रक्तपान करते समय परजीवी बालू मक्खी के मुख में रहता है तथा पुनः रक्तपान के समय परजीवी रक्त परिसंचरण में आ जाता है। फिर यह प्लीहा एवं अस्थि मज्जा में चला जाता है। यदि ऐसे संक्रमित मानव में कालाज़ार परजीवी के प्रति रोग निरोधक क्षमता नहीं हो तो वह बीमार पड़ जाता है। बुखार लम्बी अवधि तक रह सकता है। शुरू में बुखार के कारण का पता नहीं लगता है। कुछ दिनों बाद शरीर पीला पड़ने लगता है। प्लीहा बढ़ने से पेट फूला हुआ नज़र आने लगता है। शरीर सूखने लगता है। बाल रूखे और कड़े होने लगते हैं। रोग की गम्भीरता में आने पर त्वचा का रंग काला पड़ जाता है। अतः तब इस रोग को कालाजार के नाम से जानते हैं।

सरकार द्वारा एवं स्वयं सेवी संस्थाओं के द्वारा इस रोग के नियंत्रण के लिए समय-समय पर कई उपाय किये जाते रहे हैं, फिर भी यह बीमारी पूर्ण रूप से नियंत्रण में नहीं आ पायी है।

कालाज़ार का नियंत्रण

(अ) सामाजिक स्तर पर नियंत्रणः सामाजिक स्तर पर इस रोग के नियंत्रण के लिए कालाजार नियंत्रण कार्यक्रम में सहयोग देना है।

कालाज़ार रोगियों की पहचान

समाज में अगर किसी को लम्बी अवधि तक का बुखार हो और मलेरिया आदि इलाज से ठीक नहीं हो रहा हो तो ऐसे व्यक्ति को निकट के अस्पताल में ले जाने की सलाह देनी चाहिए।

1. डीडीटी छिड़काव में कर्मचारियों को सहयोग देना चाहिए। छिड़काव से पूर्व एवं छिड़काव के बाद की सभी शर्तो को मानना चाहिए । चूंकि, कालाज़ार नियंत्रण का मूल कार्यक्रम इन्ही पर आधारित है। इसके अलावा कीटनाशी संसिक्त मच्छरदानी के प्रयोग का भी प्रावधान कुछ समुदायों में प्रयोगात्मक लक्ष्य से किया जा रहा है। इनके निर्देशों का भी पालन करना चाहिए। समुदाय के मुखिया एवं गणमान्य लोगों की नैतिक जिम्मेदारी बनती है कि समाज के हर लोगों के स्वास्थ्य पर ध्यान रखा जाए एवं अगर कोई सार्वजनिक हित की बात हो तो मिलजुल कर उस कार्यक्रम को सफल बनाने का प्रयास करना चाहिए।

2. घर या गोशाला के अंदर अगर बालू मक्खी के पनपने लायक वातावरण नहीं रहने दिया जाये तो इनसे भी कालाज़ार पर काबू पाया जा सकता है। इसके लिए निम्न पहलुओं पर ध्यान देना आवश्यक है जैसेः-

- मवेशियों को घर में सोने के कमरे में नहीं रखना चाहिए।
- गोशाला निवास गृह से दूर रखना चाहिए।
- पुरानी दीवार के निचले हिस्से के पास झड़ती हुई भुरभुरी मिट्टी को साफ करते रहना चाहिए। चूंकि बालू मक्खी ऐसे स्थानों पर ही अंडा देती है।
- घर के अंदर सभी दरारों को बंद कर देना चाहिए। क्योंकि बालू मक्खी इन दरारों में ही निवास करती है।
- घर को यथा-संभव नमी से मुक्त रखना चाहिए। क्योंकि नमी बालू-मक्खी के लिए बहुत जरूरी है।
- घर के अंदर प्रकाश और हवा की पर्याप्त व्यवस्था होनी चाहिए, क्योंकि बालू मक्खी रोशनी से दूर भागती है।

उपर्युक्त बातों पर ध्यान रखने से बालू-मक्खी को घर एवं गोशालाओं में पनपने से रोका जा सकता है। बालू मक्खी की गैर मौजूदगी में रोगी का संक्रमण संभव ही नहीं है।

(ब) व्यक्तिगत स्तर पर नियंत्रण

- अगर आप रोगग्रस्त हैं तो जब तक पूर्ण रूप से स्वस्थ्य नहीं हो जाते हैं, बिना चिकित्सक की सलाह के दवा को बंद नहीं करें।
- चिकित्सा के दौरान चिकित्सक द्वारा दिये गये निर्देशों का पालन जैसे खान-पान एवं समय-समय पर जांच पर ध्यान रखें।
- बालू मक्खी के दंशन से बचने के लिए शरीर को ढक कर रखना आवश्यक है।
- सोते समय महीन छेद वाली मच्छरदानी का प्रयोग करना चाहिए।
- शाम के समय पैर, शरीर के खुले भाग पर तेल लगा लेने से बालू मक्खी के काटने की संभावना कम हो जाती है।
- मच्छर भगाने वाली टिकिया आदि के प्रयोग से भी बालू मक्खी के काटने से बचा जा सकता है।

कालाज़ार से बचाव पर ध्यान देना आवश्यक है, जिससे इस रोग से बचा जा सके। परिवार में किसी व्यक्ति के कालाजार से ग्रसित होने पर कई सामाजिक-आर्थिक क्षति देखी गई हैं जैसेः

व्यक्तिगत हानि

- रोगी का कमजोर हो जाना।
- इसका इलाज दीर्घ अवधि तक चलता है।
- ठीक होने के बाद भी पुरानी अवस्था में आने पर 4-6 महीने का समय लग जाता है।

पारिवारिक हानि

- अगर परिवार का कमाऊ व्यक्ति बीमार पड़ गया तो परिवार के सभी सदस्यों को कष्ट झेलना पड़ता है।
- परिवार का खर्च/बजट गड़बड़ हो जाता है।

सामाजिक कार्य की हानि

- यह बीमारी अक्सर मजदूर वर्गों में होती है। अतः मजदूर के बीमार पड़ने पर सामाजिक कार्य पर भी असर पड़ता है।

राष्ट्र की हानि

- एक भी व्यक्ति के बीमार होने पर सभी तंत्र की जिम्मेदारी होती है कि उन्हें रोग मुक्त किया जाए। सबका प्रयास उनके बेहतर इलाज का होता है। लेकिन उनकी व्यक्तिगत क्षति से राष्ट्र के कार्य में जो बाधा आती है उसकी भरपाई नहीं की जा सकती है।

अतः, अगर हम व्यक्तिगत स्तर पर इस बीमारी के नियंत्रण की बात सोचें तो एक स्वस्थ्य समाज एवं राष्ट्र की परिकल्पना कर सकते हैं।

कालाज़ार, जांच एवं इलाज संबन्धित जानकारी

कालाज़ार का इलाज संभव है। समय पर इलाज नहीं होने पर इसके साथ अन्य बीमारियां जैसे तपेदिक, निमोनिया आदि भी हो जाती है। कालाज़ार एवं एच आई वी/एड्स की बीमारी भी कई जगह साथ-साथ पाई गई।

जांच

कालाजार मरीजों की जांच दो विधियों द्वारा की जाती है-

1.आर. के. 39 (रैविड काइनेसिन 39 के. डी.)
2.अस्थि मज्जा एवं तिल्ली के छेदन से

इलाज

कालाज़ार की पुष्टि होने पर निम्नलिखित दवाओं का प्रयोग किया जाता है-

1.एसएजी (सोडियम एन्टीमनी ग्लूकोनेट)

मात्राः 20 मि. ग्रा. प्रति किलो शारीरिक भार प्रति दिन (30 दिनों तक)

रोगमुक्ति दरः 50 से 60 प्रतिशत बिहार के लिए अन्य राज्यों में शत-प्रतिशत

कुप्रभाव

हृदय रोग (कार्डाइटिस)
जोड़ों का दर्द
किडनी निःसफलता

2.एम्फोटेरिसिन बीः यह उत्तम एवं कारगर दवा है।

मात्राःइसे 5 प्रतिशत डेक्सट्रोज/ग्लूकोज में एक मि.ग्रा. प्रति किलो शारीरिक भार के हिसाब से मिलाकर एक दिन के अंतराल में 15 दिनों तक अन्तःशिरा विधि द्वारा दिया जाता है।

इस दवा से इलाज के पूर्व वृक्क कार्य जांच/सीरम क्रिएटिनीन एवं रक्त यूरिया जांच आवश्यक है।

रोग मुक्ति दरः 97-98 प्रतिशत
कुप्रभावः कभी-कभी किडनी निःसफलता

3. मिल्टेफोसिनः कालाजार उन्मूलन अभियान 2015 के अंतर्गत विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा इसकी स्वीकृति प्रदान कर दी गई है।

मात्राः2.5 मि.ग्रा. प्रति किलो शारीरिक भार के आधार पर 28 दिनों तक कैप्सूल फार्म में मुखीय विधि से खाने की दवा।

रोग मुक्ति दर 94-95 प्रतिशत

कुप्रभावः कभी-कभी अतिसार एवं पीलिया

अनुसंधान के अंतर्गत नई दवाः

1. पारामोमाइसिन (इंजेक्शन) 15 मि.ग्रा. प्रति किलो शारीरिक भार, रोग मुक्ति दर 95 प्रतिशत
2. सितामाक्वीनः शोध जारी है।
3. एम्बीसोमः शोध जारी है।

निष्कर्ष

कालाज़ार को निर्धनता से सम्बद्ध रोग जाना जाता है, इसके उपचार का पहलू संतुष्टि स्तर तक नहीं है क्योंकि इससे प्रभावित लोगों की आमदनी प्रायः सौ रुपए/दिन से कम होती है। इसके अतिरिक्त औषधियों की संख्या अत्यधिक कम है, जो उपलब्ध हैं वे विषाक्त तथा महंगी हैं जो निर्धन लोगों की खरीदने की क्षमता से ज्यादा है। इसलिए यह बेहतर है कि डी डी टी के छिड़काव या कीटनाशी संसिक्त मच्छरदानियों के प्रयोग द्वारा इसकी रोकथाम की जाए। यह भी सिफारिश की जाती है कि यदि किसी व्यक्ति को 2 सप्ताह की अवधि से अधिक समय तक बुखार रहे तो उसे समीपस्थ प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र में जाकर चिकित्सक की सलाह लेनी चाहिए। इसके अलावा प्रभावित तथा खतरे वाली आबादी में प्रतिरक्षा स्तर को बढ़ाने के लिए बेहतर खाद्यों के सेवन तथा स्वस्थ जीवन शैली को अपनाने की सिफारिश की जाती है है। यदि इन पहलुओं पर ध्यान दिया गया तभी हम 2015 तक इस रोग के उन्मूलन का सपना साकार कर सकेंगे।

यह लेख पटना स्थित राजेन्द्र स्मारक चिकित्साविज्ञान अनुसंधान संस्थान के वैज्ञानिक 'बी' डॉ दिवाकर सिंह दिनेश, वैज्ञानिक 'डी' डॉ कृष्णा पाण्डेय एवं निदेशक डॉ प्रदीप दास से प्राप्त हुआ है।

परिषद के समाचार

राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय गतिविधियों में परिषद के वैज्ञानिकों की भागीदारी

मुम्बई स्थित आंत्रविषाणु अनुसंधान केन्द्र के निदेशक डॉ जे एम देशपाण्डे ने जेनेवा, स्विट्ज़रलैण्ड स्थित विश्व स्वास्थ्य संगठन में सम्पन्न वैश्विक पोलियो प्रयोगशाला नेटवर्क (GPLN) पर 15वीं अनौपचारिक परामर्श में भाग लिया (23-25 जून, 2009) ।

नई दिल्ली स्थित विकृतिविज्ञान संस्थान की वैज्ञानिक 'ई' डॉ पूनम सलोत्रा ने मैड्रिड, स्पेन में सम्पन्न RAPSODI परियोजना की संचालन समिति में भाग लिया (24-26 जून, 2009)।

चेन्नई स्थित राष्ट्रीय जानपदिकरोगविज्ञान संस्थान के वैज्ञानिक 'ई' डॉ आर रामकृष्णन ने स्विट्ज़रलैण्ड स्थित स्विस ट्रॉपिकल इंस्टीट्यूट (STI) के वैज्ञानिकों के साथ चर्चा हेतु भ्रमण किया (22-26 जून, 2009)।

पुणे स्थित राष्ट्रीय विषाणुविज्ञान संस्थान के निदेशक डॉ ए सी मिश्रा ने स्वास्थ्य प्रयोगशाला सेवाओं के दृढ़ीकरण 2010-2015के लिए बाली, इण्डोनेशिया में सम्पन्न एशिया पेशिफिक स्ट्रेटेजी कार्यशाला में भाग लिया (23-25जून, 2009)।

कोलकाता स्थित राष्ट्रीय हैज़ा तथा आंत्ररोग संस्थान के निदेशक डॉ जी बी नायर ने CHOLDI नेट हेतु संदर्भ के पहलुओं को पारिभाषित तथा इसकी कार्य योजना विकसित करने के लिए नवनिर्मित हैज़ा तथा अतिसारीय संक्रमण नेटवर्क (CHOLDInet) पर द्वितीय अति व्यापक परामर्श के नेतृत्व हेतु जेनेवा, स्विट्ज़रलैण्ड में सम्पन्न विश्व स्वास्थ्य संगठन की बैठक में भाग लिया (28-30जून, 2009)।

पॉण्डिचेरी स्थित रोगवाहक नियंत्रण अनुसंधान केन्द्र के वैज्ञानिक एफ-डॉ के डी रमैया ने लसीका फाइलेरिया रोग में एम डी ए प्रभाव, एम डी ए रोकने पर महत्वपूर्ण अनुसंधान प्रश्नों की पहचान तथा एम डी ए पश्चात निगरानी कार्य पर जॉर्जिया यूएसए में सम्पन्न बैठक में भाग लिया (30 जून से 2 जुलाई, 2009)।

परिषद से सहायता प्राप्त संगोष्ठियां/सेमिनार/कार्यशालाएं/पाठ्यक्रम सम्मेलन

संगोष्ठियां/सेमिनार/कार्यशालाएं/ पाठ्यक्रम/ सम्मेलन	दिनांक एवं स्थान	सम्पर्क के लिए पता
बायोस्पेक्ट्रम 2009 द्वितीय हरित क्रांति पर अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठीः प्राथमिकताएं, कार्यक्रम, सामाजिक एवं नीतिविषयक पहलू	2-4 जुलाई, 2009 (तिरुवनन्तपुरम)	डॉ सी.बालागोपालन, आयोजन सचिव एवं अनुसंधान के निदेशक एवं रेजीडेन्ट डीन स्कूल ऑफ बायोसाइन्स मार एथानासिओस कॉलेज फॉर एडवान्सड् स्टडीज़, तिरुवल्ला- 689101
साउथजोन (दक्षिणजोन) यूरोलॉजिकल सोसाइटी ऑफ इन्डिया का 20वां वार्षिक सम्मेलन	11-13 जुलाई, 2009 (बेलगांव में)	डॉ शैलेश अमरखेड, आयोजन सचिव एवं सहायक प्रोफेसर, यूरोलॉजी विभाग KLES डॉ प्रभाकर कोर अस्पताल एवं MRC,नेहरू नगर, बेलगांव-590010
भारतीय विज्ञान, इंजीनियरिंग एवं प्रौद्योगिकी में नवीन प्रगति पर द्वितीय राष्ट्रीय सम्मेलन	17-19 जुलाई, 2009 (नई दिल्ली में)	डॉ डी. पी. भट्ट, आयोजन सचिव NCISET वैज्ञानिक एफ एवं प्रमुख IRRM, राष्ट्रीय भौतिकी प्रयोगशाला, नई दिल्ली-110012
पर्यावरणी प्रदूषण, पारिस्थितिकी तथा मानव स्वास्थ्य पर अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठी	22-27 जुलाई, 2009 (तिरुपति में)	प्रो.जी.राजरमी रेड्डी, अध्यक्ष-ISEPEHH-09 जन्तुविज्ञान विभाग, श्री वेंकेटश्वर विश्वविद्यालय, तिरुपति-517502
सूक्ष्मजीवीरोधी प्रतिरोध एवं औषधि खोज पर राष्ट्रीय संगोष्ठी	9-10 सितम्बर, 2009 (कोइम्बटूर में)	श्री एन. प्रभु, आयोजन सचिव एवं प्रवक्ता सूक्ष्मजीवविज्ञान विभाग, डॉ एन जी पी आर्ट्स एवं साइन्स कॉलेज कोइम्बटूर-641048
विकासशील देशों में जन्म के समय दोष तथा अपंगताओं पर चौथा अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन	4-7 अक्टूबर, 2009 (नई दिल्ली में)	डॉ आई.सी.वर्मा आयोजन सचिव एवं वरिष्ठ परामर्शक, प्रमुख आनुवंशिक चिकित्सा विभाग, सर गंगाराम अस्पताल, नई दिल्ली-110060

संपादक मण्डल

अध्यक्ष
डॉ विश्व मोहन कटोच
महानिदेशक,
भारतीय आयुर्विज्ञान अनुसंधान परिषद
एवं
सचिव, भारत सरकार,
स्वास्थ्य एवं अनुसंधान विभाग

सदस्य
डॉ ललित कान्त
डॉ बैला शाह

प्रमुख, प्रकाशन एवं सूचना
डॉ के. सत्यनारायण

संपादन
डॉ कृष्णानंद पाण्डेय
डॉ रजनी कान्त

भारतीय आयुर्विज्ञान अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली के लिए श्री जगदीश माथुर द्वारा आई सी एम आर ऑफसेट प्रेस, नई दिल्ली से मुद्रित एवं प्रकाशित पं. सं. 47196/87